International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030; Impact Factor: RJIF 5.24
Received: 14-11-2019; Accepted: 15-12-2019; Published: 16-01-2020
www.advancedjournal.com
Volume 5; Issue 1; 2020; Page No. 70-73

कबीर की उलटवाँसियों पर गोरखनाथ का प्रभाव

डॉ० सरिता चौहान
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, एमसीएस डीएवी महिला–कॉलेज, सेक्टर 36–ए, चण्डीगढ़, भारत।

सारांश
हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकालीन निर्गुण संतों की वाणी में रहस्यात्मकता का गहरा पुट देखने को मिलता है। साम्प्रदायिक, साधनात्मक एवं वैचारिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति की दुरूहता के कारण इनकी वाणी में गुह्यता बढ़ती चली गई। संत कवियों ने अपनी रहस्यात्मक अनुभूतियों को विरोधात्मक प्रतीक योजना तथा सांकेतिक शैली के माध्यम से अभिव्यक्त किया। ऐसी गुह्यकृच्छ उक्तियों को उलटवाँसी शब्द से व्यवहृत किया जाने लगा। कबीर द्वारा रचित उलटवाँसियों ने एक ओर परवर्ती संतों को बहुत अधिक प्रभावित किया तो दूसरी ओर कबीर स्वयं नाथों विशेष रूप से गोरखनाथ की 'उलटी चरचा' से प्रभावित हुए।

मूल शब्द: उलटवाँसी, उलटी चरचा, नाथ, उर्ध्वमुखी प्रवाह, साधना, प्रतीक, योग साधना।

प्रस्तावना
सफल एवं समर्थ अभिव्यक्ति की चिरन्तन समस्या चिरकाल से मनीषियों, विचारकों तथा विश्लेषकों द्वारा विचारणीय रही है। शब्द अक्षर ब्रह्म है। शब्द के माध्यम से मन के भावों एवं विचारों को अभिव्यक्ति मिलती है किन्तु अनुभवगम्य एवं अनिवर्चनीय को यथावत् अभिव्यक्त करना सम्भव नहीं। सूक्ष्म की अभिव्यक्ति स्थूल द्वारा नहीं की जा सकती। अभिव्यक्ति की चिरन्तन समस्या का समाधान साधक संतों ने उलटवाँसी शैली के माध्यम से प्रस्तुत किया और कबीर निस्संदेह उनमें अग्रणी एवं प्रमुख रहे है।

उलटवाँसी एक प्रतीकात्मक शैली है जो कि 'उलटी चरचा' के रूप में गोरखनाथ के साहित्य में पल्लवित एवं प्रतिष्ठित हो चुकी थी। असम्बद्धता उलटवाँसी का एक सर्वप्रमुख और अनिवार्य तत्त्व है जिसके गर्भ में प्रायः किसी न किसी प्रकार का विरोध विद्यमान रहता है। उलटवाँसी में बुद्धिपूर्वक साधनात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति होती है। उलटवाँसी साहित्य की रचना आध्यात्मिक तत्त्व की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही है। सर्वत्र ही इसका प्रयोग चेतना के उर्ध्वमुखी प्रवाह के लिए हुआ हैं। इस शैली में निहित आध्यात्मिक साधना प्रक्रिया का जो निगूढ़ रूप है उसकी जटिलता और दुरूहता के पीछे अधिकारी और अनधिकारी एवं पात्रत्व की योग्यता के प्रश्न का सिद्धांत रहा है।

उलटवाँसी शैली का प्रयोग यद्यपि हमें कबीर से बहुत पूर्व वैदिक युग, ब्राह्मण ग्रंथों, बौद्ध, सिद्ध एवं नाथ साहित्य में पुष्कल परिमाण में उपलब्ध होता है। सिद्धों की प्रतीक प्रधान संध्या भाषा विरोधगर्भित असम्बद्धता लिए हुए उलटवाँसी पद रचना का आदि रूप है। इस कथन शैली ने नाथ सम्प्रदाय के माध्यम से हिन्दी साहित्य की उलटवाँसियों को प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य में उलटवाँसी शैली को परिष्कृत स्वरूप कबीर के समय में ही प्राप्त हुआ। विषय–प्रतिपादन, प्रतीक–योजना, रूपक–तत्त्व और चमत्कार–सृष्टि में उनके उलटवाँसी पद परवर्ती सन्तों के लिए अनुकरणीय रहे हैं। उस समय के समाज को तो कबीर के उलटवाँसी पदों ने प्रभावित किया ही था, आधुनिक आलोचक वर्ग भी इनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। कबीर ने इस शैली के माध्यम से एक ओर तो संसार की असारता, नश्वरता और परिवर्तनशीलता व्यंजित की है तो दूसरी ओर परम सत्य के परात्पर, परम और मानवीय ज्ञान के परे का अनुभव भी सम्प्रेषित किया है।

उलटवाँसी शैली का स्वरूप
उलटवाँसी शैली में बुद्धिसाध्य, विरोधगर्भित, असम्बद्ध, वक्र कथन शैली को अपनाया जाता है। इस शैली में व्यंग्य और वक्रता की विशेष चमक तथा अतिक्रान्त युक्तियों की विशेष योजना रहती है। उलटवाँसी शैली की विशेषता यह है कि इसमें किसी भाव या विचार का प्रकटीकरण इस प्रकार किया जाता है कि यह अपने बाह्य रूप में सर्वथा असम्भव, अतार्किक तथा असंगत प्रतीत होती है परन्तु प्रतीकार्थ स्पष्ट हो जाने पर पाठक या श्रोता को एक विशेष प्रकार की मानसिक तृप्ति का अनुभव होता है। यह तृप्ति समस्यापूर्ति, दृष्टकूट या पहेली आदि से प्राप्त सुखानुभूति से भिन्न एवं स्थायी होती है। कहा गया है कि अयोग्य के प्रति 'तत्त्व–कथन' से विद्या 'निर्वीया' हो जाती है। यही कारण है कि अध्यात्म विद्या एवं आध्यात्मिक रचनाऐं सदैव से ही गूढ़ रखी गई हैं –

> ''प्रकाशत् सिद्धि हानिः स्यात् वामाचारगतो प्रिये।
> अतो वामपथे देवी गोपयति मातृ जारवत्।।''
> – विश्वसार तंत्र

उलटवाँसी का व्युत्पत्तिपरक अर्थ
उलटवाँसी शब्द के अर्थ एवं प्रयोग के सम्बन्ध में विद्वानों के अलग–अलग मत है। डॉ० सरनामसिंह शर्मा ने इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी है– ''मेरी समझ में इस शब्द की दो व्युत्पत्तियाँ हो सकती हैं– एक तो ' उलटवाँसी' संयुक्त शब्द से और दूसरी 'उलटवास' से सम्बन्धित। पहले शब्द उलटवाँ का अर्थ 'उलटी हुई' और 'सी' का अर्थ समान है। अतएव ' उलटवाँसी' का अभिप्राय हुआ 'उलटी हुई प्रतीत होने वाली उक्ति'। दूसरी उलटवास शब्द से। 'परमपद' या अध्यात्म लोक में रहने वाले का निवास वास्तव में 'उलटवास' है। इससे सम्बंधित वाणी 'उलटवासी' वाणी कहला सकती है। .... इस शब्द में 'आ' के ऊपर जो सानुनासिकता दिखाई पड़ती है वह अकारण है।''[1] उलटवाँसी में बात उलटी सी प्रतीत होती है परन्तु वास्तव में वह उल्टी नहीं होती। इस अर्थ में संत तुलसी साहब ने इसे नासमझ के लिए उलटी तथा समझदार के लिए सुलटी कहा है– ''अली इक बात सुन सुलटी। बिन समझै लगै उलटी।''[2]

उलटवंशी–उलटवंसी–उलटवाँसी। इस शब्द विकास का आधार वह वंशी या बाँसुरी है जिसके द्वारा अनाहदनाद उत्पन्न होता है। यह ध्वनि या नाद सिर्फ 'साधक' को ही सुनाई पड़ता है। इस अर्थ में अनाहदनाद सम्बंधी अनुभवों को व्यक्त करने वाली वाणी उलटवाँसी है। उल्लेखनीय है कि उलटवाँसी शैली में लिखित उदाहरण पद्यरूप में ही मिले हैं। इनमें गेय तत्त्व की प्रधानता देखी जाती है। बूझै, बुझहु, विचारै आदि क्रियापदों का प्रयोग, विस्मय सृष्टि, लोकमार्ग का व्यतिक्रम इस शैली की अन्य विशेषताएँ हैं।

उलटवाँसी शैली के अन्य अभिधान

'उलटवाँसी' शब्द आधुनिक युग की उपलब्धि है। साधक–संतो ने उलटवाँसी के समकक्ष जिन अन्य अभिधानों का प्रयोग किया है वे इस प्रकार हैं–

कबीर – अकथ कहानी, उलटि बेद

''अकथ कहानी प्रेम की कछु कही न जाई।''[3]
''है कोई जगत गुर ग्याँनी, उलटि बेद बूझै।''[4]

तुसली साहब (हाथरस वाले)– उलटीचाल, उलटबास[5]
धनी धरमदास– अचरज ख्याल[6]
मलूकदास – अजबकथा[7]
दयाबाई – अटपटी बात[8]
भीखा साहब– अकथ कथन[9]
पलटू साहिब – उलटावती[10]

उलटवाँसी के व्युत्पत्तिपरक एवं परम्परागत अर्थो के अध्ययन के बाद यह कहा जा सकता है कि इस शैली को प्रयोक्ता सन्तों तथा आलोचकों ने चाहे जो भी नाम दिया हो सर्वत्र ही इसका प्रयोग अभिव्यक्ति की एक विशिष्ट पद्धति के रूप में हुआ।

उलटवाँसी शैली और नाथ साहित्य

''ऋग्वेद से ही जन्म लेकर लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं के प्रमुख तीर्थो का स्पर्श करती हुई, नाम रूप से परिवर्तित होती हुई साधना श्री प्रतीक जीवी, विरोधगर्भिता वाणी उलटवाँसी या उलटीचरचा के रूप में गोरखनाथ के साहित्य में पल्लवित एवं प्रतिष्ठित हो चुकी थी।''[11] गोरखनाथ ने अपनी साधनात्मक अनुभूतियों को उलटी चरचा के माध्यम से अभिव्यक्त किया। '' बौद्ध वज्रयानियों में से सिद्ध गोरखनाथ (गोरक्षपा) ने शैव सिद्धांत पर अपने एक नये ही सम्प्रदाय की नींव डाली जिसे नाथपंथ कहते है।''[12] वास्तव में बौद्ध सिद्धगण विचारधारा के अनुसार नाथपंथी और साम्प्रदायिक परम्परा से बौद्ध थे। नाथपंथ में पातंजल योग के ईश्वरवाद को लेकर साधना में हठयोग का सूत्रपात किया गया है। साधना पद्धति की दृष्टि से नाथ–पंथियों में योग की प्रधानता है। नाथों में तांत्रिक पद्धतियों का उतना आग्रह नहीं है, जितना कि सिद्धों में। नाथपंथ में चित्तवृत्ति के निरोध के लिए अष्टांग योग की प्रक्रिया का प्रवेश हुआ और साधना चक्र से नारी का बहिष्कार हुआ। इस पंथ में डोम्बी, मातंगी, ललना, रसना आदि शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ। नाथों की उलटीबानियों ने विषय और शैली दोनों ही दृष्टियों से हिन्दी साहित्य के निर्गुणी सन्तों को पर्याप्त प्रभावित किया है। साधनात्मक रहस्य को निगूढ़ रखने के लिए नाथ योगियों ने उलटी चरचा का आश्रय लिया। नाथयोगियो का मानना था कि सीधे मार्ग या भवधारा के अनुकूल चलने से जीवन के मूल स्रोत अर्थात् ईश्वर से सभी प्राणी दूर होते जा रहे हैं। इसलिए योगी लोग दुनिया से उलटी बात कहने के मानों अभ्यस्त हो गए। परवर्ती सन्तों की उलटवाँसियों के लिए नाथों के उलटवाँसी पद पूर्व रूप कहे जा सकते हैं। इस कथन शैली ने नाथ सम्प्रदाय के माध्यम से समग्र रूप में हिन्दी साहित्य की उलटवाँसियों को प्रभावित किया है। नाथों की उलटवाँसियों के विषय में यह उल्लेखनीय है कि इनकी उलटवाँसियों में गोपन के प्रति आग्रह उतना नहीं है जितना कि चमत्कार के प्रति। ''नाथ योगी चौबीस कहे जाते हैं।''[13] इन नाथों में सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्तित्व गोरखनाथ (गोरक्षनाथ, गोरक्षपा) का है।

गोरखनाथ ने अपनी रहस्यमयी अनुभूतियों को उलटी चरचा के माध्यम से अभिव्यक्त किया। चमत्कार प्रवृत्ति और रहस्यात्मकता के संयोग ने गोरखनाथ की वाणी को अत्यन्त अद्भुत बना दिया है। यथा–

''चींटी केरा नेत्र में, गज्येन्द्र समाइला।
गावड़ी के मुख में, बाघला बिबाइला।।''[14]

अर्थात् हाथी चींटी के नेत्र में प्रवेश करता है और गाय के मुख में बाघिन ब्याती है। लोक में इनकी उलटवाँसियों को 'गोरखधन्धा' के नाम से जाना जाता है। इन्होंने सबदी और पद दोनों में ही उलटवाँसियाँ कही है। अपनी साधनात्मक अनुभूति को व्यक्त करते हुए वे कहते हैं कि

''डूंगरि मंछा जलि सुसा, पाणी में दौं लागा।
अरहट बहै तृसालवां, सूलै काँटा भागा।।''[15]

अर्थात् पानी में आग लगी है, मछली पहाड़ पर है ओर खरगोश जल में है। प्यासों के लिए रहट बहने लगी है और शूल से निकल कर कांटा नष्ट हो गया है। गोरखनाथ ने अपनी साधना प्रक्रिया में वज्रयानियों की ही तरह घट के भीतर ही इड़ा, पिंगला, षटचक्र, अनाहदनाद आदि की ओर संकेत देने वाली उक्तियों का आश्रय लिया है–

''नीझर झरे अमीरस पिवणा,
सटदल बेध्या जाई
चाँद बिहुणा चाँदला,
देखा गोरख राई।।''[16]

अर्थात् षटदल का भेदन हो जाने पर पीने हेतु अमृत रस का झरना झरने लगता है। विषय की दृष्टि से इनकी उलटवाँसियों में उपदेश प्रधान, परीक्षा सम्बंधी एवं साधनात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति ही अधिक है। विरोधमूलक होने के कारण इनसे कौतुहल सृष्टि हुई है। इन उलटी चरचाओं में योग–शास्त्रीय शब्दों के अतिरिक्त प्रकृति के व्यापक धरातल से प्रतीकों का चयन किया गया है।

कबीर एवं उलटवाँसी शैली

कबीर मूलतः भक्त और सन्त थे। ब्रह्मानुभूति की अभिव्यक्ति हेतु उन्होंने परम्परा से चली आ रही उलटवाँसी शैली का आश्रय लिया। इनकी उलटवाँसियों में निहित ज्ञानबोध मनुष्य को ईश्वर से जोड़ता है। भवसागर में डूबे मायाबद्ध जीवों की नींद पर आक्रमण कर उन्हे सजग एवं सचेष्ट बनाकर भवसागर से पार लगाना कबीर की उलटवाँसियों का ध्येय है। कबीर ने विभिन्न विषयों पर उलटवाँसियाँ कही हैं। इनमें अधिक संख्या साधनात्मक एवं उपदेश प्रधान उलटवाँसियों की है तथा सबसे कम संख्या गुह्य साधनापरक उलटवाँसियों की है। कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया का वर्णन करते हुए कबीर कहते हैं–

''आकासे मुखि औंधा कुवाँ, पाताले पनिहारि।
ताका पाँणी को हंसा पीवै, बिरला आदि बिचारि।।''[17]

पाण्डित्य एवं कौतुहल–सृष्टि विषयक उलटवाँसियों के माध्यम से कबीर ने भवधारा में बहे जा रहे मोहासक्त लोगों का ध्यान आकृष्ट किया तथा अवधु, पांडे, पंडित आदि की बहुज्ञता को चुनौती दी। कबीर कहते हैं–

''समंदर लागी आगि, नादियाँ जलि कोइला भई।
देखि कबीरा जागि, मंछी रूषाँ चढ़ि गई।''[18]

इस उलटवाँसी में विरोधाभास का चमत्कार है। सामान्य जन समुद्र में आग लगने और मछली के पेड़ पर चढ़ने से चमत्कृत है और इस रहस्य को समझ नहीं पाता। किन्तु जब उसे ज्ञात होता है कि यहाँ समन्दर–विषययुक्त संसार, आग–ज्ञानाग्नि, नदी–विषय विकार, मछली–कुण्डलिनी, रूषां–शून्य शिखर है, तो वह चमत्कृत एवं आनंदित हो जाता है। एक और उलटवाँसी में कबीर कहते हैं–

''पहलै पूत पीछे भई माँई, चेला के गुरू लागें पाई।''[19]

यह सुनकर विषयों में भरमाया जीव अचम्भित हो जाता है। यह उलटवाँसी उसे बताती है कि सृष्टि में पहले चैतन्य विकसित हुआ और फिर माया का जन्म हुआ। विकार युक्त मन जो पहले चित्त को गुरू जैसी शिक्षा देता था वही अब निर्विकार चित्त की वन्दना कर रहा है। ''वास्तव में कविता जीवन के निगूढ़तम रहस्यों का उद्घाटन करती है गोपन नहीं, किन्तु गोपन शैली कभी–कभी कुतूहल–वर्धन करके सामान्य से अधिक भावकत्व को उद्बुद्ध करती है।''[20] कबीर की उलटवाँसियों का उद्देश्य भी यही था।

गोरखनाथ एवं कबीर की उलटवाँसियों में साम्य

योग कबीरबानी का एक प्रमुख अंग है। कबीर पर यह प्रभाव गोरखनाथ के माध्यम से पड़ा। गोरखनाथ द्वारा प्रयुक्त प्रतीकों, पारिभाषिक शब्दों तथा विरोधगर्भित असम्बद्ध कथनशैली ने कबीर को अत्यधिक प्रभावित किया। दिए गये उदाहरणें में कबीर पर गोरखनाथ का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है–

गोरखनाथः ''बीज बिन निसपती मूल बिन बिरसा पान फूल बिन फलिया।''[21]
कबीरः ''बीज बिन अकूर पेड़ बिन तरवर, बिन साषा तरवर फलिया।''[22]
गोरखनाथः ''चले बटावा थाकी बाट, सौवै डुकरिया ठौरे खाट।''[23]
कबीरः ''हारी बाट बटाऊ जीत्या, जानत की बलिहारी।''[24]
गोरखनाथः ''धरती उलटी गगन कूं दौरी।''[25]
कबीरः ''धरती उलटी अकासहि ग्रसै।''[26]
गोरखनाथः ''चींटी परबत ढोल्या रे अवधु।''[27]
कबीरः ''चींटी परबत ऊषण्याँ, ले राख्यौ चौड़े।''[28]
गोरखनाथः ''गाय बाघ बिडारया जी।''[29]
कबीरः ''गाइ नाहर खायौ।''[30]
गोरखनाथः ''मृगा चीता मारया जी।''[31]
कबीरः ''हरनि खायौ चीता।''[32]
गोरखनाथः ''बाँझ केरा बालूडा प्यंगुल तरवरि चढ़िया।''[33]
कबीरः ''बाँझ का पूत बाप बिना जाया बिना पाऊँ तरबरि चढिया।''[34]
गोरखनाथः ''डूंगरि मंछा जलि सुसा।''[35]
कबीरः ऊँचे टीबे मंछ बसत है, ससा बसे जल माँही।''[36]

वास्तव में नाथ सम्प्रदाय की साधना पद्धति हठयोग पर आधारित है और कबीर ने इसी साधना पद्धति को अपनाया है। नाम–स्मरण, सुरति, कुण्डलिनी–योग, अजपा–जाप, अनाहदनाद आदि को कबीरबानी में भी स्थान मिला है। अनाहदनाद सुनाई पड़ने की स्थिति का वर्णन गोरखनाथ ने कई स्थानों पर किया है। कबीर भी उसका समर्थन करते हैं।

''कह कबीर जिय संसा नाँही, सबद अनाहद बाजा।''[37]

गोरखनाथ के 'उलटी' पवन चक्र बेधिया' का प्रयोग कबीरबानी में कई स्थानों पर हुआ है–

''उलटि पवन चक्र षट बेधा।''[38]

इसी प्रकार कबीर ने गगन और शून्य शब्दों का एक दूसरे के पर्याय के अर्थ में प्रयोग करते हुए, इसे भी नाथ सम्प्रदाय के प्रचलित अर्थ में ग्रहण किया–

''गगन मंडल आसण किया।''[39]

इसमें संदेह नहीं है कि कबीर ने उलटवाँसियों में हठयोगमूलक साधना पद्धति का वर्णन किया है किन्तु कबीर की हठयोग साधना में मौलिकताओं की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इनकी साधना के महत्वपूर्ण अंग हैं– प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और सहज समाधि। नियम, आसन और प्राणायाम पर कबीर ने अधिक जोर नहीं दिया। गोरखनाथ ने ज्ञान के मार्ग से यौगिक साधना को प्रेरित किया किन्तु कबीर ने ज्ञान और भक्ति का अपूर्व संयोग किया। वास्तव में कबीर गोरखनाथ से प्रभावित तो थे किन्तु उन्होने गोरखनाथ द्वारा प्रयुक्त शब्दों एवं प्रतीको में नया अर्थ भर दिया।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कबीर को गोरखनाथ की कुतूहल प्रधान शैली उत्तराधिकार के रूप में मिली। इसे सजा–संवार कर कबीर ने एक नया रूप दिया। इन्हीं की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर कबीर ने उलटवाँसी प्रयोग में ऐसी सीमारेखा खींची है जिसका अतिक्रमण परवर्ती सन्त–साहित्य नहीं कर पाया है। उलटवाँसी शैली को कबीर के रूप में ऐसा समर्थ प्रयोक्ता मिला जिसने विषय प्रतिपादन, प्रतीक–योजना, रूपक–तत्त्व चमत्कार–सृष्टि आदि की दृष्टि से उलटवाँसी शैली को एक नया रूप एवं तेज प्रदान कर उसे एक सशक्त माध्यम के रूप में परवर्ती संतो को सौंप दिया।

सन्दर्भ सूची

1. कबीर एक विवेचन, डॉ० सरनाम सिंह शर्मा, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, संस्करण–1960, पृष्ठ–322
2. घट रामायाण (भाग–2), तुलसी साहब, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण–सात, पृष्ठ–177
3. कबीर ग्रन्थावली, संपादक– श्री श्यामसुन्दर दास, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पन्द्रहवां संस्करण, पृष्ठ–104, पद–156
4. उपर्युक्त, पृष्ठ–104, पद –160
5. तुलसी साहब की शब्दावली और जीवन चरित (पहला भाग) बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण–1953, पृष्ठ–136
6. धनी धरमदास जी की शब्दावली, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग, संस्करण–चतुर्थ, पृष्ठ–32
7. मलूकदास जी की बानी, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग, संस्करण–पंचम, पृष्ठ–3
8. सन्तबानी संग्रह (भाग–एक) बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग, संस्करण–1915, पृष्ठ–172
9. भीखा साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग, संस्करण–प्रथम, पृष्ठ–20
10. पलटू साहब की बानी (पहला भाग), बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग,

संस्करण–छठा, पृष्ठ–177
11. हिन्दी सन्तों का उलटवाँसी साहित्य, डॉ० रमेशचन्द्र, मिश्र, आर्य बुक डिपो, करोल बाग–दिल्ली, संस्करण–1969, पृष्ठ–प्रस्तावना।
12. हिन्दी काव्य में अन्योक्ति, डॉ० संसार चन्द्र, उमेश प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–1979, पृष्ठ–186
13. नाथ–सिद्धों की बानियाँ, सम्पादक–हजारी प्रसाद द्विवेदी, नागरी प्रचारिणी सभा–काशी, संस्करण–संवत् 2014, पृष्ठ–6,7
14. गोरखबानी, सम्पादक, डॉ० पीताम्बर बड़थ्वाल, संस्करण–तृतीय, पृष्ठ–129
15. उपर्युक्त, पृष्ठ–129
16. हिन्दी काव्य में अन्योक्ति, डॉ० संसार चन्द्र, पृष्ठ–187
17. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–12, साखी–45
18. उपर्युक्त, पृष्ठ–9, साखी–10
19. उपर्युक्त, पृष्ठ–72, पद–11
20. निर्गुण स्कूल ऑफ हिन्दी पोयट्री, डॉ० पीताम्बर बडथ्वाल, पृष्ठ–220
21. गोरखबानी, पृष्ठ–108
22. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–105, पद–36
23. गोरखबानी– पद–47
24. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–110, पद–176
25. गोरखबानी, पृष्ठ–152
26. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–106, पद–162
27. गोरखबानी, पृष्ठ–154
28. कबीर ग्रंथवली, पृष्ठ–106, पद–161
29. गोरखबानी, पृष्ठ–154
30. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–105, पद–160
31. गोरखबानी, पृष्ठ–154
32. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–105, पद–160
33. गोरखबानी, पृष्ठ–108
34. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–105, पद–158
35. गोरखबानी, पृष्ठ–112
36. कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–110, पद–176
37. उपर्युक्त, पृष्ठ–85, पद–70
38. उपर्युक्त, पृष्ठ–71
39. उपर्युक्त, पृष्ठ–60